विष्णुसहस्रनाम और जिनसहस्रनाम

लक्ष्मीचन्द्र सरोज, एम० ए०, जावरा, म० प्र०

हिन्दुओंके विष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रके समान जैनों में भी सहस्रनाम स्तोत्र प्रसिद्ध है। प्रायः दोनों समाजोंमें भक्तजन प्रतिदिन सहस्रनाम-स्तोत्र पढ़ते हैं। अन्तर केवल इतना है कि हिन्दू समाजमें यह स्तोत्र पूजनके पश्चात् पढ़ते हैं और जैन समाजमें यह स्तोत्र पूजनकी प्रस्तावनामें पढ़ते हैं। असुविधा या शीघ्रताके कारण जो जिनसहस्रनाम पढ़ नहीं पाते हैं, वे भी प्रतिदिन जिनसहस्रनामके लिये अर्घ्य तो चढ़ाते ही हैं। पर्युषण या दशलक्षण पर्वमें तो प्रायः सभी स्थानों पर पूजनकी प्रस्तावनामें जिनसहस्रनाम पढ़नेकी और उसके प्रत्येक भागकी समाप्ति पर अर्घ्य या पुष्प चढ़ाने की भी परम्परा है। यद्यपि जिनसहस्रनाममें जिन भगवानके और उनके गुणोंको व्यक्त करने वाले एकहजार आठ नाम हैं, तथापि इसकी ख्याति सहस्रनामके रूपमें वैसे ही है जैसे मालामें एक सौ आठ मोती या दाने होने पर भी हिन्दू लोग उन्हें सौ ही गिनते हैं, अथवा उपलब्ध सतसइयों में सात सौ से अधिक छन्द होने पर भी उन्हें सात सौ ही गिनते हैं।

प्रस्तुत प्रसँगमें उल्लेखनीय यह भी है कि हिन्दू धर्ममें विष्णुसहस्रनामके समान शिवसहस्रनाम या गोपालसहस्रनाम और सीतासहस्रनाम भी मिलते हैं। इसी प्रकार जैनोंमें भी जिनवाणीमें संग्रहीत लघुसहस्र-नाम भी पठनार्थ मिलता है।

संज्ञा और रचयिता : दोनों सहस्रनामोंकी संज्ञा सार्थक है। विष्णुसहस्रनाममें भगवान विष्णुके एक हजार नाम हैं और जिनसहस्र नाममें भागवान जिनके एक सहस्र नाम हैं। विष्णुसहस्रनामके रचयिता महर्षिवर वेदव्यास हैं। यह उनके अमर ग्रन्थ महाभारतके आत्मानुशासन पर्वमें भीष्म-युधिष्ठिर सम्वादके अन्तर्गत है। जिनसहस्रनाम-स्तोत्रके रचयिता आचार्य जिनसेन हैं, जो कीर्तिस्तम्भके सदृश अपने आदि पुराण के लिये सुप्रसिद्ध हैं।

छन्द, प्रस्तावना और समापन : दोनों सहस्रनाम स्तोत्र संस्कृत भाषाके उस अनुष्टुप् छन्दमें हैं जो आठ अक्षरोंके चार चरणोंसे बना है। दोनों सहस्रनाम स्तोत्रोंमें अपनी प्रस्तावना है और अपना समापन है। पर जहाँ विष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रकी प्रस्तावना में तेरह और समापन में बारह श्लोक हैं वहाँ जिनसहस्र-नाम स्तोत्रकी प्रस्तावनामें तेतीस और समापनमें तेरह श्लोक हैं। विष्णुसहस्रनाममें कुल १४२ श्लोक हैं और जिन सहस्रनाममें कुल १६७ श्लोक हैं।

दोनों सहस्रनाम अपने-अपने धर्म और देवताकी देन को सँजोये हैं। दोनों की अपनी शिक्षा और संस्कृति है, पर विष्णुसहस्रनाममें जहां लौकिक प्रवृत्ति भी लक्षित होती है, वहाँ जिनसहस्रनाममें अलौकिक निवृत्ति ही लक्षित हो रही है। जहां विष्णुसहस्रनाममें कर्तृत्वभाव मुखरित हो रहा है, वहाँ जिनसहस्र-नाम प्रस्तुत प्रसंगमें मौन है। उसमें आद्योपान्त वीतरागताका ही गुंजन हो रहा है। चूंकि दोनों स्तोत्र भक्तिमूलक हैं और भक्तिमें भगवानका आश्रय लेना ही पड़ता है, अतएव विचारके धरातलमें दोनों ही सहस्रनाम भक्तिके प्रकाशस्तम्भ हैं। जहाँ विष्णुसहस्रनाममें एकमात्र विष्णु ही सर्वोपरि शीर्षस्थ है, वहाँ जिनसहस्रनाममें सभी जिनेन्द्रोंको पूर्णतया सर्वशक्तिसम्पन्न अनन्तदर्शन-ज्ञान-बल-सुखसम्पन्न समझनेकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुस्पष्ट स्वीकृति है। विष्णुसहस्रनाममें वर्णित एक हजार नाम भीष्म युधिष्ठिरको सुनाते हैं, जिन सहस्रनाममें उल्लिखित एक हजार आठ नाम जिनसेन पाठकोंके लिये लिखते हैं, पर उन्होंने भी समापनके दसवें श्लोकमें संकेत किया है कि इन नामोंके द्वारा इन्द्र ने भगवानकी स्तुति की थी।

विष्णुसहस्रनामकी प्रस्तावनामें कहा गया है कि विष्णु जन्म,मृत्यु आदि छह विकारोंसे रहित है, सर्वव्यापक है, सम्पूर्ण लोक-महेश्वर है, लोकाध्यक्ष है। इनकी प्रतिदिन स्तुति करने से मनुष्य सभी दुखोंसे दूर हो जाता है :

अनादिनिधनं विष्णुं सवलोकमहेश्वरम्।
लोकाध्यक्षं स्तवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत्॥

जिन सहस्रनामकी प्रस्तावनामें कहा गया है कि जिनेन्द्र भगवान वीतराग, क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं। आप अजर और अमर, अजन्म और अचल तथा अविनाशी हैं, अतः आपके लिये नमस्कार है। आपके नाम का स्मरण करने मात्रसे हम सभी परम शान्ति और अतीत सुख-सन्तोष तथा समृद्धि को प्राप्त होते हैं। आपके अनन्त गुण हैं:

अजराय नमस्तुभ्यं नमस्ते अतीतजन्मने।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यं अचलायाक्षरात्मने॥
अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावका गुणाः।
त्वन्नाम स्मृतिमात्रेण परमं शं प्रशास्महे॥

विष्णुसहस्रनामके समापनमें कहा गया है कि जो पुरुष परम श्रेय और सुख पाना चाहता हो, वह भगवान् व्यास द्वारा कहे गये विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रका प्रतिदिन पाठ करे :

इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम्।
पठेत् य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च॥

जिनसहस्रनामके समापनमें भी आचार्य जिनसेनने लिखा है कि इस स्तोत्रका प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक पाठ करने वाला भक्त पवित्र और कल्याणका पात्र होता है। विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रका समापन अनुष्टुप् छन्दमें ही हुआ है पर जिनसहस्रनामस्तोत्रका समापन अनुष्टुप्से अन्य छन्दमें हुआ है। दोनों ही स्तोत्र सार्थ मिलते हैं, अतएव संस्कृतविद् सुधी पाठक ही नहीं, अपितु हिन्दी भाषी भी दोनों स्तोत्रोंका आनन्द ले सकते हैं।

समानता, असमानता एवं कलात्मकता

दोनों सहस्रनामोंमें जहाँ कुछ समानता और असमानता है, वहाँ कुछ कलात्मक न्यूनाधिकता भी है। यह उनके रचयिताओंकी अभिरुचि है, पर दोनोंकी भगवद्भक्ति अनन्य निष्ठाकी अभिव्यक्ति करती है। स्थविष्ठ, स्वयंभू, सम्भव, पुण्डरीकाक्ष, सुव्रत, हृषीकेश, शंकर, धाता, हिरण्यगर्भ, सहस्रशीर्ष, धर्मयूप जैसे शब्द दोनों स्तोत्रोंमें मिलते हैं। देवताओंकी नामावलीमें ऐसे शब्द आ जाना अस्वाभाविक नहीं है। कारण, एक तो प्रत्येक भाषाके अपने शब्दकोषकी सीमा है और दूसरे एक धर्म, एक व्यक्ति, एक साहित्य, एक संस्कृति अपने अन्य समीपस्थ धर्म, व्यक्ति, साहित्य और संस्कृतिसे प्रभावित हुये बिना रह नहीं सकती है। फिर यह तो भाषा है।

नामावलीकी समानताके सूचक कतिपय उदाहरण यहाँ सतर्क, सजग होकर देखें। प्रत्येक उदाहरणमें प्रथम पंक्ति विष्णुसहस्रनामकी है और द्वितीय-तृतीय पंक्ति जिनसहस्रनामकी है। भगवान्के नामोंके आधार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर भक्तोंमें भावनात्मक एकताकी अभिवृद्धिकी बात भी देश और कालको दृष्टिमें रखते हुये निस्संकोच कही जा सकती है।

(१) स्वयम्भू शम्भुरादित्यः पुष्पकराक्षो महास्वनः ।
श्रीमान् स्वयम्भू वृषभूः सम्भवः शम्भुरात्मनः ।।
(२) अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जितेन्द्रियः कृतक्रियः ।।
(३) अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।
धर्मयूपो दयारागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।।
(४) अनन्तगुणोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ।
मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः
(५) श्रीदः शीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रः चतुरास्यः चतुर्मखः ।।

प्रबुद्ध पाठक देखेगें कि पांचवें उदाहरणकी प्रथम पंक्ति और चतुर्थ उदाहरणकी द्वितीय पंक्ति पढ़ते हुये लगता है कि एक ही पोशाकमें सड़क पर दो विद्यालयोंके विद्यार्थी जा रहे हैं और साहित्यकी दृष्टिसे अनुप्रास अलङ्कार तो सुस्पष्ट है ही।

विष्णुसहस्रनामकी नामावलीमें विभाजन नहीं है, पर जिनसहस्रनामकी नामावली दस विभागोंमें विभाजित है। विष्णुसहस्रनामकारने शायद इसलिये विभाजन नहीं किया कि विष्णुके सभी नाम पृथक् पृथक हैं ही, परन्तु जिन सहस्रनामकारने शायद इसलिये सौ-सौ नामोंका विभाजन कर दिया कि जिससे श्लोक पाठसे थकी जनताकी जिह्वाको, वाणीको कुछ विश्राम मिले और अर्घ्य चढ़ानेमें भी यत्किंचित् सुखानुभूति हो।

हिन्दू धर्मकी एक प्रमुख विशेषता समाहार शक्ति भी है। उसमें एक ईश्वरके तीन रूप-ब्रह्मा, विष्णु, महेशकी शक्तियोंमें हैं और विष्णु भगवान्के चौबीस अवतार भी हैं। इनमें ऋषभदेव और बुद्ध भी हैं। इसी उदात्त भावनाका सूचक विष्णुसहस्रनामका निम्नलिखित श्लोक है जिसमें अनेक लोगोंका एकत्रीकरण या पुण्यस्मरण किया गया है :

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदः विवेकवान् ।।

इस श्लोकमें राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्धको जहाँ स्मरण किया, वहाँ सालोक, सामीप्य, सायुज्य, सारूप्य गतिके साथ मन, बुद्धि अहँकार और चित्तको भी दृष्टिमें रखा तथा धर्म, अर्थ काम और मोक्ष पुरुषार्थोंके साथ ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेदको भी नहीं भुलाया। यह श्लोक अनुप्रास अलंकारका भी ज्वलन्त निदर्शन है।

अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।
अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः ।।

अणु, बृहत्, कृशः, स्थूल, गुणभृत, निर्गुण, अधृत, स्वधृत जैसे विरोधी सार्थक शब्दोंको अपनेमें समेटे हुये यह श्लोक विरोधाभास अलंकार प्रस्तुत कर रहा है, यह कौन नहीं कहेगा ? विष्णुसहस्रनाममें

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीर्थंकर, श्रमण, वृषभ, वर्धमान शब्दोंका प्रयोग हिन्दी और जैन विद्वानोंके लिये विशेषतया दर्शनीय, पठनीय और चिन्तनीय है :

वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।
वर्धनो वर्धमानश्चविविक्तः श्रुतिसागरः ।
मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः
आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥

जिनसहस्रनाम स्तोत्रमें स्थविष्ठादिशतकका चतुर्थ श्लोक पुनः पुनः पठनीय है। इसमें भगवान जिनेन्द्रका गुणगान करते हुये कहा गया है कि जिनेन्द्रदेव पृथ्वीसे क्षमावान हैं, सलिल-से शीतल हैं, वायुसे अपरिग्रही हैं, और अग्निशिखा सदृश उर्ध्वधर्मको धारण करनेवाले हैं। सुप्रसिद्ध उपमानोंसे अपने आराध्य उपमेयकी अभिव्यक्तिकी यह विशिष्ट शैली किसके हृदयको स्पर्श नहीं करेगी ?

क्षान्तिर्भाक् पृथ्वीमूर्तिः शान्तिर्भाक् सलिलात्मकः ।
वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥

इसी प्रकार श्रीवृक्षादिशतके आठवेंसे ग्यारहवें श्लोकोंमें और महामुन्यादिशतके आरम्भिक छह श्लोकोंमें कवि-कुल-भूषण जिनसेनने 'म, वर्णके शब्दोंकी झड़ी लगाकर प्रबुद्ध पाठकोंको भी चमत्कृत कर दिया है। उदाहरणस्वरूप महामुनि तीर्थंकर विषयक निम्नलिखित श्लोक देखिये, जो अनुप्रास अलंकारका एक श्रेष्ठतम उदाहरण है :

महामुनिर्महामौनी महा ध्यानी महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥

जिनसहस्रनाम-स्तोत्रमें जितने भी श्लोक हैं, वे जिनके ही विषयमें हैं, उनमें योगमूलक निवृत्ति है, भोगमूलक वह लोक प्रवृत्ति नहीं है जो विष्णुसहस्रनामके पुष्पहंस, ब्राह्मणप्रिय जैसे शब्दोंके प्रयोगमें हैं।

दिग्वासादिशतंका प्रथम श्लोक जिनचर्याका एक उत्कृष्ट उदाहरण है :

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थो निरम्बरः ।
निष्किंचनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥

दिशायें जिनके वस्त्र हैं और जिनका हवा भोजन है, जो बाहर भीतरकी ग्रन्थियों (मनोविकारों) से रहित हैं, स्वयं आत्माके वैभव सम्पन्न होनेसे ईश्वर हैं और वस्त्रविहीन हैं, अभिलाषाओं और आकांक्षाओंसे रहित हैं, ज्ञानरूपी नयनवाले हैं और अमावस्याके अन्धकार सदृश अज्ञान-मिथ्यात्व-दुराचारसे दूर हैं, ऐसे जिन ज्ञानाब्धि, शीलसागर, अमलज्योति तथा मोहान्धकारभेदक भी हैं। जिन सहस्रनाममें ब्रह्मा, शिव, बुद्ध, ब्रह्मयोनि, प्रभविष्णु, अच्युत, हिरण्यगर्भ, श्रीगर्भ, पद्मयोनि जैसे नाम भी जिन (जितेन्द्रिय) के बतलाये गये हैं।

जिनसहस्रनाममें जिनको प्रणवः, प्रणयः, प्राणः, प्राणदः, प्रणतेश्वरः" कहा गया है। इसके अनुरूप ही विष्णुसहस्रनाममें "वैकुण्ठः, पुरुषः, प्राणः, प्राणदः, प्रणवः, पृथुः,, कहा गया है। जिनसहस्रनाम स्तोत्रमें जहाँ "प्रधानमात्मा प्रकृतिः, परमः, परमोदयः,, कहा गया है, वहाँ विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रमें "योगायोगविदां नेता प्रधानपुरुषेश्वरः" कहा गया है। जिनसहस्रनाममें "सदागतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्यपरायणः" कहा गया। "सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः,, भी कहा गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार दोनों स्तोत्रोंके शब्दों, अर्थों और भावोंमें पर्याप्त साम्य उपलब्ध होता है और यह संकुचित स्वार्थ पर आधारित साम्प्रदायिक व्यामोहसे ऊपर उठकर भावनात्मक एकता और धार्मिक सहिष्णुताकी ओर इंगित करता है। धर्मकी धरा पर जातिका नहीं, गुण और कर्मका ही महत्त्व है। जैनधर्मके प्रचारक तीर्थंकर जैन (वैश्य) नहीं, अपितु क्षत्रिय ही थे।

अनन्यभक्तिनिष्ठा

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देव देव॥

यह श्लोक विष्णुसहस्रनामका आमुख ही है पर यह उसमें नहीं है। इसमें जैसे भक्तकी भगवान विषयक अनन्य निष्ठाकी अभिव्यक्ति हुई है, वैसे ही जिनसहस्रनामके निम्नलिखित श्लोकमें भी जिनसेन या जिनभक्तकी अनन्यनिष्ठा प्रगट हुई है :

त्वमतोऽसि जगद्बन्धुः, त्वमतोऽसि जगद्भिषक्।
त्वमतोऽसि जगद्धाताः त्वमतोऽसि जगद्धितः॥

संक्षेपमें दोनों ही सहस्रनाम अपनेमें अनन्य निष्ठाको आत्मसात् किये हैं और भगवानके एक नहीं, अनेक नामोंके लिये स्वीकृति दे रहे हैं। दोनों ही प्रतिदिन पढ़े जाने पर भक्तोंके लिये लोक-परलोकके कल्याणकी बात कह रहे हैं। सारणी १ में उपरोक्त विवेचनका संक्षेपण किया गया है।

सारणी १. जिनसहस्रनाम और विष्णुसहस्रनाम

		जिनस०	विष्णुस०
१	रचयिता	जिनसेन	वेदव्यास
२	श्लोक संख्या	१६७	१४२
३	प्रस्तावनामें श्लोक	३३	१३
४	समापनमें श्लोक	१३	१२
५	छन्द	अनुष्टुप्	अनुष्टुप्
६	अलंकार	उपमा, अनुप्रास बहुल	उपमा-अनुप्रास बहुल
७	नाम	१००८	१००८
८	उद्देश्य	परमश्रेय, अलौकिक निवृत्ति	परमश्रेय, किंचित् शुभ लौकिक प्रवृत्ति
९	विभाजन	दश अध्याय	——
१०	अभिव्यक्ति	वीतरागता	ईश्वरके प्रति कर्तव्यभाव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org